प्राथमिक शिक्षा का वैश्विक दृश्य

❑ राजाराम भादू

यदि शिक्षा से गरीबों को गरीबी के अभिशाप से मुक्त करने की उम्मीद की जाती है तो निर्धनतम देशों में खुद शिक्षा को विपन्नता के जंजाल से निकालना होगा?

प्राथमिक शिक्षा के वैश्विक परिदृश्य पर यह टिप्पणी हम संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) की ताजा रिपोर्ट 'बदलती दुनिया में शिक्षक और शिक्षा' (1998) से उद्धृत कर रहे हैं । इस रिपोर्ट के मद्देनजर शिक्षा का वैश्विक परिदृश्य सिर्फ विपन्न ही नहीं, खासा विषम और विकलांग नजर आता है ।

जॉन स्मिथ के मुख्य संपादन में 170 पृष्ठ का यह दस्तावेज शिक्षा के मोर्चे पर विश्व-स्तरीय असफलताओं की कई परतें खोलता है । इस दस्तावेज में 180 से अधिक देशों के आंकड़ों को शामिल करते हुए कहा गया है कि दुनिया भर में 15 करोड़ बच्चे स्कूल नहीं जा पा रहे हैं । और जो जा रहे हैं - उनमें सबसे गरीब देशों के बच्चों को स्कूल में न कापी-किताबें मिल पा रही हैं और न पीने का पानी । यह हाल तब है जब अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 'सबके लिए शिक्षा' का नारा जोर-शोर से बुलंद हो रहा है और कई देश यह दावा कर रहे हैं कि वे सामाजिक सेवाओं पर खर्च बढ़ाने जा रहे हैं या बढ़ा रहे हैं ।

दस्तावेज कहता है कि विकासशील देशों में शिक्षा के मद पर बाहरी सहायता के स्रोत सूखते जा रहे हैं और शीत-युद्धोत्तर विश्व में रक्षा-बजट में कटौती का लाभ शिक्षा को मिलने के संकेत दिखायी नहीं देते हैं । अधिकांश विकासशील देशों ने यूनेस्कों द्वारा पूर्व में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में शिक्षा पर रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए शिक्षा के बजट में कटौती की बात स्वीकार की है । जबकि 'आर्थिक समायोजन' की दिशा में बढ़त का दावा किया है । यहां तक कि विकासशील कनाडा ने अर्थ-व्यवस्था में 'कटौती की संस्कृति' का उल्लेख किया है । यूनेस्को के द्वारा सबको शिक्षा देने के लक्ष्य की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा के बावजूद बड़ी संख्या में बच्चे और किशोर औपचारिक शिक्षा से वंचित हैं । दस्तावेज के अनुसार सिर्फ 6 से11 वर्ष के ऐसे बच्चों की संख्या ही 15 करोड़ है, 11 से 14 वर्ष तक के बच्चों की बात यह दस्तावेज नहीं करता ।

दस्तावेज में कहा गया है कि जो बच्चे स्कूल जा भी रहे हैं, उन्हें ज्ञान हासिल करने लायक माहौल नहीं मिल पा रहा है । अफ्रीकी देश बेनिन, बुर्किना फासा, ईथोपिया और तंजानिया के 90 फीसदी स्कूलों में बिजली ही नहीं है और 13 में से 10 देशों के 90 प्रतिशत बच्चों की कक्षा में दुनियां का मानचित्र तक उपलब्ध नहीं है । बुरुन्डी में आंतरिक राजनीतिक संकट के चलते स्कूल-प्रणाली लगभग ठप्प होकर रह गई है ।

ऐसे वक्त में जबकि भविष्य के तथाकथित 'सूचना-प्रधान समाज' को बनाने की तैयारी हो रही है, ज्यादातर स्कूल सामान्य सुविधाओं से वंचित हैं । यहां तक कि सबसे विकसित देश भी अपने स्कूलों में नयी सूचना व संचार तकनीक को अपनाने की घोषणाएं तो बहुत करते हैं लेकिन इन के प्रति तत्पर दिखायी नहीं देते । तब पिछड़े देशों की तो क्या बात की जाये ?

राष्ट्रीय विकास में शिक्षा की अहम् भूमिका को स्वीकारते हुए भी ज्यादातर देशों के शिक्षा-बजट सिकुड़ रहे हैं और शिक्षा की गुणवत्ता में ह्रास जारी है । नवीनतम शिक्षा-तकनीकों के इस्तेमाल को लेकर विभिन्न देशों के बीच गैर-बराबरी को स्वीकार करते हुए दस्तावेज चेतावनी देता है कि आने वाले वर्षों में पर्सनल कंप्यूटर और इंटरनेट पढ़ाई के परंपरागत तरीकों को बदलकर रख देंगे । दूसरी ओर यूनेस्को को संबोधित सदस्य देशों की रपटें यह बताती लगती हैं कि किस तरह उनके शैक्षिक उपक्रम भावी पीढ़ी को बदलती दुनिया के अनुकूल बनाने की पुरजोर कोशिश कर रहे हैं ।

शिक्षा की विकलांगता के बारे में दस्तावेज बताता है, विश्व के 5 करोड़ 70 लाख शिक्षक उन बुनियादी सुविधाओं से वंचित हैं जो उन्हें अपने काम को ढंग से अंजाम देने के लिए मिलनी चाहिए। शिक्षकों पर इस बात के लिए तो दबाव बढ़ा है कि वे अच्छे नतीजे लाएं या बच्चों से सर्वश्रेष्ठ हासिल करें, लेकिन उनका वेतन और सामाजिक दर्जा जस का तस है बल्कि कई देशों में तो घटता जा रहा है।

यूनेस्को द्वारा शिक्षकों की दशा के बारे में 1966 में आयोजित सम्मेलन और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने शिक्षकों के प्रशिक्षण और सेवा-शर्तों के बारे में संबंधित देशों को विस्तृत दिशा-निर्देश दिए थे । मौजूदा दस्तावेज अनेक देशों द्वारा इन सिफारिशों को लागू नहीं किए जाने की शिकायत करता है। दस्तावेज कहता है ''सेवारत शिक्षकों के मुकाबले कम वेतन पर वैसे ही योग्यता वाले 'दिहाडी' शिक्षकों को काम पर लेना सिफारिशों का खुल्लमखुल्ला उल्लंघन है ।''

शिक्षक की हैसियत को शिक्षा की गुणवत्ता से जोड़ते हुए दस्तावेज में कहा गया है ''अधिकतर देशों में समाज शिक्षकों से अपेक्षाएं तो बहुत करता है लेकिन उस अनुपात में उन्हें उनकी सेवाओं का अवदान नहीं देता । वह इस बात की परवाह नहीं करता कि वे किस मुश्किल माहौल में काम करते हैं और न ही कोई चिंता की जाती है कि वे कैसे बच्चों को असरदार ढंग से पढ़ाने के लिए अपने ज्ञान को समृद्ध करें ।''

भविष्य के विश्व समाज की रचना में दुनिया के करोड़ों लोगों की कोई भूमिका हो सकती है और शिक्षा की इस 'भूमिका' को रुपाकार देने में कोई भूमिका है - प्रस्तुत दस्तावेज से यूनेस्को का ऐसा कोई नजरिया नहीं झलकता । दस्तावेज से लगता है जैसे विश्व की मानव-नियति तय करने वाली शक्तियां अदृश्य हैं, हमें तयशुदा नियति को भुगतने के 'काबिल' बनना है और शिक्षा को इसमें मदद करनी है। यूनेस्कों दस्तावेज शिक्षा के जरिये मानवीय विवेक के सृजनात्मक हस्तक्षेप की बजाय यथास्थिति के अनुकूलन की पक्षधरता करता प्रतीत होता है ।

इस वैश्विक परिदृश्य में भारत कहां है ? हर कोई कह सकता है कि शिक्षा का वैश्विक-दृश्य भारत के जैसा है । यदि भूमंडीकृत 'ग्राम' पर यूनेस्को-दस्तावेज की रोशनी डालें तो ठीक भारत के जैसी शैक्षिक विषमता, विपन्नता और विकलांगता नजर आयेगी । कुछ लोग इसी बात को उलट कर कह सकते हैं कि भूमंडलीय शैक्षिक दुनियां की सभी प्रवृत्तियां भारत में मौजूद हैं। अर्थात शिक्षा के क्षेत्र में तीखी विषमता, वित्तीय दरिद्रता और विकलांगता है। भारत में एक साथ अमेरिका-बिट्रेन से लेकर ईथोपिया और तंजानिया तक मौजूद हैं ।

आजादी के पांच दशक उपरांत, यूनेस्कों के सुर में सुर मिलाकर किये गये प्राथमिक शिक्षा को लेकर अनेक संकल्पों,'घोषणाओं', और कार्यक्रमों के बावजूद राजसत्ता की 'इच्छाशक्ति' पर संदेह के अनेक कारण हैं, जैसे, शिक्षा के प्रति संवैधानिक संकल्पों का स्थगन क्या व्यक्त करता है ? शिक्षा में समानता, गुणवत्ता और जनतांत्रिक शैक्षिक-तंत्र स्थापित करने के प्रयासों का सार क्या है ? मुख्यधारा शिक्षा-व्यवस्था की खामियों पर लगातार बात हुई है लेकिन इन्हें दूर करने के प्रयासों का आकलन क्या कहता है ? क्या प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीनकरण का प्रयास इसके जनतांत्रीकरण और विकेन्द्रीकरण के बिना संभव है ? आदि । ◆